GOVERNMENT OF INDIA
NATIONAL LIBRARY, CALCUTTA

Class No. H 954.5
Book No. GU 831
N. L. 38.
MGIPC—S1—36 LNL/60—14-9-61—50,000.

इतिहास माला के दूसरे वर्ष का उपहार ।

लेखक
बाबू गङ्गाप्रसाद गुप्त ।

सिखोंका साहस

प्रकाशक-
गंगाप्रसाद अरोड़ा ।

3143

प्रथम बार १०००] [दाम =) आना ।

Printed by G. P. Varma at the
Kalpataru Press, Benares.

Rs. 1-00

12 R/- Punjab - History A

Re. 1.00

H
954.5
Gu 831

NATIONAL LIBRARY
NO. 10919
DATE 5.11.60
CALCUTTA

27 ew.

भूमिका

"धर्म्मएव हि रक्षति स रक्षितः"—गीता ।

किस्से कहानियों या उपन्यासोंमें अधिकतर लोगोंका मन लगता है, परन्तु यदि ऐतिहासिक वा उपदेशजनक किस्से आदि लिखे जायँ तो उनके द्वारा मनोरंजनके साथ ही समाज और देशका बहुत कुछ उपकार भी हो सकता है। यह छोटी पुस्तक कलकत्तेकी श्रीमती कुमुदिनी मित्र बी० ए० की लिखी 'शिखेर बलिदान' नामक बँगला पुस्तकका भाषान्तर मात्र है, परन्तु बंगाल देशकी निवासिनी होनेके कारण पञ्जाबी नाम ग्राम आदिमें जहां कहीं उन्होंने भूल की थीं उन भूलोंको हमने यथासम्भव सुधार दिया है। हमारा अनुरोध है कि प्रत्येक हिन्दू गृहस्थ इस पुस्तकको अपने बालकों और बालिकाओंको अवश्य पढ़नेको दें। विशेषता एकबार पुस्तक पढ़नेसे मालूम होगी। इति।

काशी,
८-७-१९०८.

निवेदक—गङ्गाप्रसाद गुप्त।

विषय सूची

विषय ।			पृष्ठ ।
(१) गुरु तेगबहादुर	....	....	१ से ५ तक
(२) फतहसिंह जोरावरसिंह	...	....	६ से ९ तक
(३) मणिसिंह और हकीकत	....		१० से १३ तक
(४) भाई तारूसिंह	....	....	१४ से १८ तक
(५) सुबेगसिंह, सबजासिंह	....		१९ से २२ तक

सिखोंका साहस।

गुरु तेगबहादुर।

महापुरुष नानक सिखधर्म्मके प्रतिष्ठाता थे। उनके बाद जिन महात्माओंने इस धर्म्मकी रक्षाके लिये प्राण दिये उनके अटल धर्म्मविश्वास और साहसको देखकर सारा पञ्जाब काँप उठा था। सिख वीरोंने एक समय देहलीके सिंहासन तकको हिला दिया था।

नानककी मृत्युके बाद जिन महात्माओंके ऊपर सिखधर्म्मकी रक्षाका भार पड़ा वे "गुरु" कहे जाते थे। गुरु तेगबहादुर संवत् १६६१ में पैदा हुए। पांचवें गुरु अर्जुन उनके दादा और छठे हरगोविन्द उनके पिता थे। गुरु हरगोविन्दके बाद उनके पुत्र हरराय और हररायके बाद 'हरकिशन' गुरु हुए; पर वे आठही वर्षकी उमरमें परलोकको चले गये। इसके बाद १७१२में ५२ वर्षकी उमरमें तेगबहादुरने गुरुपद पाया। देहली के बादशाहके बहुतसे प्रियपात्र यह पद पानेकी आशा करते थे। बादशाह शाहजहां सातवें गुरु हररायके पुत्र रामरायको सिखोंका गुरु बनाना चाहता था; पर सिखलोग तेगबहादुरके पक्ष में थे, क्योंकि वे इनका धर्म्म और चरित्र देखकर मुग्ध हो चुके थे।

तेगबहादुरके गुरुका पद पानेके समय औरंगजेब* अपने पिता शाहजहांको कैद करके तथा तीन भाइयोंको मारकर देहलीके

* यदि औरंगजेबका पूरा हाल जानना हो तो हमारे यहांसे बर्नियरकी भारतयात्रा मँगाकर पढ़ो। मैनेजर कल्पतरु प्रेस काशी।

तख्तका मालिक हुआ था। वह कट्टर मुसलमान था। अपनी मुसलमान प्रजाओंको खुश करनेके लिये हिन्दुओंपर अत्याचार करनेमें चूकता नहीं था। उसके समयमें हिन्दुओंके बहुतसे देव-मन्दिर मस्जिदोंके रूपमें हो गये; हिन्दू कर्म्मचारियोंकी संख्या कम हुई; हिन्दुओंके कामोंपर बराबर दृष्टि रखनेके लिये जासूस नियत थे और उनको मुसलमान बनानेके लिये अनेक उपाय किये जाते थे। देशकी इस बुरी दशामें और अनेक विघ्न पड़ने पर भी सिखधर्म्म निर्भय रूपमें फैल रहा था। तेगबहादुर ने गुरु होकर भारतवर्षके समस्त उत्तर स्थानोंमें घूमना आरम्भ किया। प्रत्येक स्थानमें मुसलमान अधिकारियोंके अत्याचार देखकर मनमें बहुत दुःखित होकर वे अमृतसरको लौटे। फिर वहांसे शतद्रुके किनारे आनन्दपुर गाँवमें जाकर रहने लगे।

एक दिनकी बात है, आनन्दपुरमें अपने शिष्योंके साथ वे बैठे थे इतनेमें एक शिष्य खड़ा होकर हिन्दुओंकी दुर्दशाका हाल उनसे कहने लगा। गुरु तेगबहादुरने कुछ सोचकर आपही आप कहा कि स्वदेश और स्वजातिकी रक्षाके लिये प्राण विसर्जन करनेका समय अब आया; बिना ऐसा किये काम नहीं चलेगा; अत्याचार नहीं रुकेगा। फिर शिष्यमण्डलीकी ओर देखकर उन्होंने कहा—"भक्तो! ईश्वरके पूजकोंको इस संसारमें बहुत क्लेश सहने पड़ते हैं; बहुत विपत्तियां भोगनी पड़ती हैं। जब देशमें पाप और अत्याचार बढ़ जाते हैं तब किसी प्यारी वस्तुका बलिदान करके उन पापों और अत्याचारोंको रोका जाता है। वर्त्तमान समयमें देशकी जो दुरवस्था है वह तुमसे छिपी नहीं है,—अतएव बताओ कि

क्या चीज उत्सर्गकर तुम इस दुरवस्थाको दूर करोगे।" तेगबहादुरके पुत्र गोविन्दसिंहने जिसकी उमर केवल १८ वर्षकी थी पिताकी बातें बड़े ध्यानसे सुनीं। इतनी छोटी उमरमें ही उसका धर्म्मविश्वास दृढ़ हो चुका था और देश तथा धर्म्मके लिये प्राण देना वह सीख चुका था। तेगबहादुरके चुप होनेपर वह उठ खड़ा हुआ और बोला—"पिताजी, सिख लोग अपने ही को सबसे प्रिय वस्तु समझते हैं।" लड़के की इस बातपर तेगबहादुर तथा सब शिष्य स्तम्भित हुए। उन्होंने देखा कि उसका उत्तर ठीक उनके संकल्पके अनुरूप है। सब शिष्य समझ गये कि गोविन्दसिंह की बातमें क्या गूढ़ मतलब भरा हुआ है। कुछ देर ठहरकर तेगबहादुर ने कहा—"शिष्यो जाओ, बादशाह और उनके आदमियोंके आगे सिख धर्म्मका बड़प्पन प्रकट करो। उनसे साफ कह दो कि सिख कभी मुसलमान नहीं हो सकते।"

जब औरङ्गजेबके कानोंतक तेगबहादुरकी यह बात पहुंची तब उसने इनको अपने सामने बुलानेकी आज्ञा दी। इनके वहां पहुंचने पर उसने बड़े आदरके साथ इनको स्थान दिया और बहुत लालच दिखाकर मुसलमान करना चाहा। पर तेगबहादुर अपने विचारपर अटल रहे। आखिर औरङ्गजेबने कहा—"यातो कोई खूबी दिखाओ या मजहब इस्लाम कबूल करो, वर्ना तुम्हारा सिर काटा जावेगा।" तेगबहादुरने दोनोंही बातें अस्वीकार कीं। मारे जानेसे पहले कई दिनोंतक वे कैद रहे; यह कैदका जमाना उन्होंने ईश्वरभजन और धर्म्मोपदेशमें बिताया। उनके तीन उपदेश यहां लिखे जाते हैं,—

"(१) ईश्वरही हमारा सहायक और आश्रयदाता है। हमारा मन उसीमें लगा रहना उचित है। (२) यह स्वाभाविक बात है कि मनुष्यका मन पापकी ओर दौड़ता है। महात्माओंको उचित है कि उपदेशकके द्वारा मनको पापके पथसे अलग ले जानेकी चेष्टा करें। (३) गुरु तेगबहादुर कहते हैं कि विश्वासत्यागकी अपेक्षा मृत्यु कहीं बढ़कर है।"

मृत्युसे वे जरा भी नहीं डरे और किसी तरहकी घबराहट नहीं दिखाई। जिस दिन वे मारे गये उस दिन प्रातःकाल प्रार्थना कर रहे थे इतनेमें घातकने आकर उनको मार डाला। इस प्रकार भारतवर्षके मध्ययुगमें एक धर्म्मवीर की मृत्यु हुई। तेगबहादुर धर्म्मके लिये प्राण देकर संसारमें यह दृष्टान्त छोड़ गये हैं कि धर्म्मकी कितनी महिमा है। मृत्यु के बाद उनके गलेसे एक कागज बँधा हुआ मिला; उसमें लिखा था "सिर दिया पर सार न दिया।"

देहली नगरीके जिस स्थानमें तेगबहादुर मारे गये वह सीसगञ्जके नामसे प्रसिद्ध था, उनके साथ मतिराम नामक एक सिख भी मारा गया था। इनकी मृत्युके बाद इनके पुत्र गोविन्दसिंह गुरु हुए। उस समय गोविन्दकी उमर १५ वर्ष की थी। इसी उमरमें धर्म्मका गूढ़तत्व वे समझ गये थे। धर्म्मरक्षाके लिये दुःख और क्लेश सहने पड़ते हैं यह वे जानते थे। तेगबहादुर जब मारे जाचुके तब औरङ्गजेबने इस बातकी जाँचके लिये आदमी भेजे कि उसकी लाश क्या हुई। औरङ्गजेबने आज्ञा दे रखी थी कि लाश जलाई न जाय, बल्कि पड़ी रहे ताकि धीरे धीरे सड़कर गलजाय। यह बात जानकर

गोविन्दसिंह पिताकी लाश लेनेके लिय देहली गये। उनके कुछ थोड़ेसे साथी थे, पर उनको उनके साथ जानेका साहस नहीं हुआ। देहलीके रास्तेमें एक बहुत छोटे दर्जेके सिखने अपने लड़के सहित उनका साथ दिया। पिता पुत्रने लाश लानेकी अनुमति मांगी। गोविन्दसिंहने अनुमति दे दी। जब अन्धेरी रातमें छिपकर पहरेवालोंसे बचते हुए वे लाश लेकर लौटने लगे तब पुत्रने कहा—'पिताजी' जब पहरुओंकी आँख खुलेंगी तब तुरन्त आदमी दौड़ेंगे और हमलोग पकड़े जावेंगे; अतएव आप मुझे मारकर यहीं रखे जाइये, ताकि फिर आपके पकड़े जानेका खटका न रहे।" पिताने आंखोंमें आँसू भरकर कहा,—"नहीं बेटा, मैं वृद्ध हूं; मुझे मारकर रख दे। तू मजबूत है; गुरुकी लाश भी उठाकर ले जा सकेगा।" जब पुत्रने न माना तब पिताने अपनेही हाथोंसे छातीमें तलवार घुसेड़ ली। उसके पुत्रने गुरु तेगबहादुरकी लाशको ले जाकर गोविन्दसिंहके पास पहुंचा दिया!

फतहसिंह, जोरावरसिंह।

गुरु गोविन्दसिंहके यत्न और उद्योगसे सिख बड़े पराक्रमशाली हो गये थे और उनके धर्म्मने भारतपर एक अपूर्व प्रभाव डाल रखा था। अपने अच्छे चरित्रके बलसे गोविन्दसिंहने बड़े दृढ़ रूपसे सिखोंके हृदयमें धर्म्मका बीज बो दिया था। सत्यधर्म्मके लिये उन्होंने मान मर्य्यादा धन सम्पत्ति सब कुछ छोड़ दिया था। उनके उद्योगसे बहुतोंने सिखधर्म्म अवलम्बन किया था। बादशाह तथा दूसरे मुसलमान कर्म्मचारियोंने यह दशा देखकर गोविन्दसिंहको दण्ड देना निश्चय किया। सन् १७६० में एक दिन मुसलमानी सेनाके एक दलने जाकर गोविन्दसिंहके गांव आनन्दपुरको घेर लिया। अकस्मात् यह विपत्ति देखकर साहसी होनेपर भी सिख घबरा गये। गोविन्दसिंह भी अपने साथियोंके भविष्यकी चिन्ता करने लगे। वे कुछ स्थिर न कर सके कि क्या करना चाहिये। यदि कुछ योद्धाओंके साथ शत्रुओं को मारते काटते निकल जानेका उद्योग करते तो अवश्यही एकदम सबके सब मारे जाते, सिखोंके धर्म्मकी रक्षा करनेके लिये कोई जीवित न बचता। इसके सिवा शत्रुओंके हाथमें धन, प्राण, मान दे देना भी ठीक नहीं था—बल्कि इसकी अपेक्षा तो मर जाना अच्छा था। सिख लोग इसी प्रकारकी बातें सोच रहे थे इतनमें मुसलमानोंकी ओरके एक दूतने आकर कहा कि यदि इसी समय तुम लोग आनन्दपुर छोड़कर चले जाओ तो तुमसे कोई नहीं बोलेगा। यद्यपि गोविन्दसिंहको इस दूतकी बातपर विश्वास

नहीं हुआ, तथापि दूसरा कोई उपाय न देखकर आखिर उन्होंने ऐसाही करना स्वीकार किया। अस्तु प्रातःकाल ज्योंही वे आनन्दपुर छोड़कर कुछ दूर गये त्योंही मुसलमानोंने आकर उनको घेर लिया। सहसा आक्रमण होनसे सिख घबरा गये, जिधर रास्ता पाया उधरही भागे; परन्तु बहुतेरे मारे गये और बहुतसे शतद्रुमें तैरते तैरते थककर डूब गये।

गुरु गोविन्द अपने दो बड़े पुत्रों तथा कुछ विश्वासी साथियोंको लेकर रूपनगरकी ओर चले गये; उनकी स्त्री कुछ साहसी सिखोंके सहित देहली गई और उनकी बुद्धा माता फतहसिंह तथा जोरावरसिंह नामक अपने दो पौत्रोंको साथमें लेकर अपने ब्राह्मण रसोइयेके साथ उसके घर गई। परन्तु उस रसोयेने विश्वासघात करके सब जवाहरात और माल असबाब छीन लिये और इनामके लालचसे उन दोनों निर्दोष बालकोंको वहांके मुसलमान शासनकर्त्ता वजीर खां को सौंप दिया। वजीरखां गुरु गोविन्दपर बहुत क्रुद्ध था; लोभी एकाएक धन पाकर जैसा प्रसन्न होता है निर्दय वजीर खां भी गोविन्दसिंहसे बदला लेनेका उपाय अर्थात् इन बालकोंको पाकर अत्यन्त आनन्दित हुआ। उसने आपही आप कहा, "इनको कत्ल न करूँगा; मुसलमान बनाऊँगा। इनके मुसलमान हो जानेसे गोविन्दसिंहको जिस कदर रञ्ज होगा उतना रञ्ज दूसरी तरह न होगा। मैं उसकी तबीअतसे बखूबी वाकिफ हूं। वह बखुशी मौतका सामना कर सकता है; लेकिन बेटोंका मुसलमान होना उसे कभी गवारा न होगा।" ये बातें सोचकर वजीरखांने फतहसिंह तथा जोरावरसिंहको

अपने पास बुलाया। कई दिनोंतक भूखे रहनेके कारण वे बेचारे सुस्त हो रहे थे, उनके गुलाबके फूलसे चेहरे सूख गये थे। जब वे दोनों दरबारमें आये तब एक अफसरने कहा, "तख्तपर नवाब साहब रौनक अफरोज हैं, उनको आदाब बजा लाओ।" जोरावरसिंहने जवाब दिया—"मैं परमेश्वरके सिवा किसीके आगे सिर नहीं झुका सकता।"

वजीरखांने कहा, "लड़को! तुम्हारे वालिद हमलोगोंके मजहबमें नहीं हैं; वे कभी माफ नहीं किये जा सकते। मगर तुम्हारा कुछ कुसूर नहीं; तुम्हारी हालत देखकर हमको रहम आता है। अगर तुमलोग मजहब इस्लाम कुबूल करो तो अभी तुम्हारा छुटकारा कर दिया जावेगा; बल्कि जब तुम बड़े होगे तब किसी बड़े ओहदेपर मुकर्रर किये जाओगे और लोग तुम्हारी इज्जत करेंगे।" परन्तु इन बालकोंमें जैसी दृढ़ धार्म्मिकता थी उसका पता वजीरखांको नहीं था। वजीरखां समझता था कि लालच दिखानेसे ये तुरन्त अपना धर्म्म त्यागना स्वीकार कर लेंगे; पर ऐसा नहीं हुआ; फतहसिंह और जोरावरसिंहने उसकी ओर देखा भी नहीं। तब वह फिर बोला, "लड़को! क्या तुम्हें अपनी जान प्यारी नहीं है? अगर जान प्यारी हो तो अभी मुसलमान हो जाओ, वर्ना जिन्दा दरगोर किये जाओगे।" इतना सुनतेही बालकोंके पवित्र मुखपर धर्म्मतेज दिखाई दिया; कुछ देर ठहरकर उनमेंसे एकने कुछ कहा जिसका यह मतलब था कि हमलोग गुरु नानकके वंशधर और गुरु गोविन्दसिंहके पुत्र हैं, मृत्युसे नहीं डर सकते, तुम्हारी जो इच्छा हो करो, इत्यादि।

फिर कहा—"मोतथों कोई डरे जो सिरजनहारथों बिछड़या होय।"

"जिनादे हिरदे बिच परमेश्वरदा पियार है उनालई मोत सच्चा जनम है।"

"जिस मरनेते जग डरे, मेरे मन आनन्द। मरनेहीते पाइये, पूरण परमानन्द॥"

वजीरखांने क्रोधमें आकर आज्ञा दी कि बालकोंको दीवारके अन्दर बिठाकर ईंटें चुन दो। घातक दोनों बालकोंको नगरकी दीवारके पास ले गये और उसका एक हिस्सा तोड़ कर उस टूटी हुई जगहमें इन दोनोंको खड़ा किया और फिर उस स्थान को ईंटोंसे वे बन्द करने लगे। वजीरखां भी वहीं था। जब कमरतक ईंटें चुन दी गईं तब उसने कहीं कि "अब भी मान जाओ।" बालकोंने कड़ककर उत्तर दिया "दुरात्मन्! तेरे जैसे निर्दय निष्ठुर व्यक्तिका धर्म्म ग्रहण करनेकी अपेक्षा हमलोगोंको मरजाना अधिक पसन्द है। याद रखना कि जिस धर्म्मके लिये आज हमलोग प्राण दे रहे हैं शीघ्रही उस धर्म्मके लोग तेरे रक्तसे पञ्जाबकी भूमि लाल कर देंगे।"

वजीरखां चुप रहा। धर्म्मवीर बालकोंने चुपचाप अपने प्राण दिये। जब उनकी पितामहीने यह हाल सुना तब वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ी और फिर न उठी।

माणिसिंह और हकीकत।

शतद्रु और यमुनाके बीचका देश पहले माल्यराज्यके नामसे प्रसिद्ध था। माल्यराज्यके अन्तर्गत कैवाल गांवमें भीका नाकम एक किसान रहता था। उसके पांच पुत्र थे जिनमें सबसे बड़ा मणि था।

पहले पहल जिस समय गुरु गोविन्द धर्म्मप्रचारके लिये माल्य प्रदेशमें गये थे उस समय बहुतसे लोग उनका उपदेश सुननेके लिये इकट्ठे हुए थे। भीका भी मणिको अपने साथ लेकर वहां गया था। कई दिन उपेदश सुनकर भीका घर लौटने लगा; पर मणिने घर जाना स्वीकार नहीं किया। मणिकी उमर उस समय केवल दश वर्षकी थी; उसके हृदयमें तबतक धर्म्मबुद्धि अच्छी तरह पैदा नहीं हुई थी। जैसे बालक कहा करते हैं वैसे उसने कहा—"गुरुजीके यहां जैसी अच्छी खीर बनती है वैसी मेरे घरमें नहीं बनती; अतएव मैं गुरुजीके पास रहूंगा—घर न जाऊँगा।" लाचार होकर भीकाने उसे वहीं छोड़ दिया; मनमें सोचा कि दो चार दिन बाद जब उसका जी न लगेगा तब वह आपही आ जायगा। पर मणि नहीं लौटा। गोविन्दसिंहने उसे बर्तन मलनेका काम सौंपा; यह काम वह आनन्दपूर्वक करने लगा। गुरु गोविन्दसिंह उसकी श्रद्धा और भक्ति देखकर उसे प्यार करने लगे और प्रसन्न होकर उन्होंने उसे सिंहकी उपाधि दी। उनकी शिक्षा और धर्म्मोपदेशसे धीरे धीरे मणिसिंह एक धार्म्मिक और

पण्डित आदमी समझा जाने लगा। वह अविवाहित रहा। धर्म्मका उसने इस ढङ्गसे प्रचार किया कि उसका धर्म्मोपदेश सुनकर बहुत लोग सिख हुए। उसकी वक्तृता बड़ी चित्ताकर्षक होती थी। उसमें यह विशेष गुण था कि अपनी बातोंसे वह दूसरोंका मन अपनी ओर खूब खींच लेता। संस्कृत, फारसी और गुरुमुखीका वह पण्डित था।

वृद्धावस्थामें अमृतसरमें एक धार्म्मिक मेला लगानेकी उसकी इच्छा हुई। मीठी बोली और भलमन्सियत उसके खास गुण थे; इसी कारण हिन्दू मुसलमान दोनों दलोंके सरकारी अफसरोंका उससे मेल था। मेला लगानेके लिये उसने लाहोरके शासनकर्त्तासे अनुमति मांगी। शासनकर्त्ताने उत्तर दिया कि पांच हजार रुपये दो तो अनुमति मिल सकती है। मणिसिंहने मनमें सोचा "मेलेमें बहुत लोग आवेंगे; वे जो कुछ चढ़ावेंगे उससे पांच हजार रुपये सहजमें इकट्ठे हो जायँगे।" इस विचारके अनुसार शासनकर्त्ताके पास मञ्जूरीका पत्र भेज कर उसने सब सिखोंको निमन्त्रित किया। मेलेका दिन निकट आते ही दलके दल सिख इकट्ठे होने लगे। इस अवसर पर चतुर शासनकर्त्ताने सोचा कि यदि सिखोंके गुरुको कैद करलिया जाय तो बड़े आनन्दकी बात होगी। ऐसा विचारकर उसने एक सेना भेजी। सेनाके आनेकी खबर सुनकर सिख लोग अपने गांवोंको लौट गये और मेला नहीं लगा जिससे रुपयाभी इकट्ठा नहीं हो सका। प्रतिज्ञाका दिन बीत जानेपर शासनकर्त्ताने रुपयेके लिये मणिसिंहके पास आदमी भेजे। भला गरीब मणिसिंहके पास पांच हजार रुपये कहांसे आते कि वह देता? जब वह रुपया न देसका तब शासनकर्त्ताके आदमी उसे

पकड़ कर लाहौर लेगये। वहां जाकर उसने कहा कि "मैंने सोचा था कि मेलेसे जो रुपये इकट्ठे होंगे उन्हींमेंसे पांच हजार आपके पास भेज दूंगा; पर सरकारी अफसरोंके दोषसे मेला नहीं लगा और इसी कारण रुपये भी एकत्र नहीं हो सके।" पर मणिसिंहकी एक भी बात नहीं सुनी गई; उसे अनेक प्रकारसे कष्ट पहुँचाया जाने लगा, अन्तमे कहा गया कि "अगर तुम मुसलमान हो जाओ तो अभी तुम्हारा छुटकारा हो।" मणिसिंहने उत्तर दिया--"यह शरीर नश्वर है। आज मैं धर्म त्याग कर प्राण बचा सकूंगा; पर एक दिन तो अवश्य ही मरना होगा। आत्मा नहीं मरती। चाहे तलवार या जिससे शरीरको काटो पर आत्मा अमर है।"—बहुत कष्ट पहुँचाकर मणिसिंह के प्राण लिये गये; तथापि उसने अपना धर्म्म नहीं त्यागा।

* * * * * *

मुसलमानी राजत्वके समय फारसी भारतकी राजभाषा थी। सरकारी नौकरी पानेके लिये आजकल जिस तरह अंगरेजी पढ़ना आवश्यक है उसी तरह उन दिनों फारसी पढ़नी पड़ती थी। फारसीके सिवा जो लोग अरबीभी जानते उनका बड़ा आदर होता। इन्ही कारणोंसे उस समय हिन्दु मुसलमान दोनों जातियोंके लड़के मौलवियों और मुल्लाओं के यहां पढ़नेके लिये भेजे जाते थे। ऐसेही एक मौलवीके यहां हकीकत नामक एक १७ वर्षका बालक सन १८०९ में पढ़नेके लिये जाया करता था। १७ वर्षकी उमरतक उसने बहुत मन लगाकर विद्या पढ़ी। इसी समय एक दिन जब कि मुल्लाजी मकतबमें उपस्थित नहीं थे मुसलमान लड़कोंने हकीकतको छेड़छेड़कर उसके धर्म्मकी निन्दा करनी आरम्भ की। हकीकतको उनकी बातें अच्छी नहीं मालूम हुई, इसलिये उस-

ने मुसलमान लड़कासे बहस की । जब मुल्लाजी लौटे तब लड़केने कहा कि हकीकतनें मुसलमानी धर्म्मकी निन्दा की है । मुल्लाने मारे क्रोधके चिल्लाकर हकीकतसे कहा—"क्या तुमने मजहब इस्लामकी हजो की?" हकीकत बोला—"जी हां, पर पहले इनलोगोंने मेरे परमेश्वरके विषयमें कुवाच्य कहे थे।" मुल्लाजी तड़प कर बोले—"अच्छा, काफिर बदकार, तुझे जल्द इसका मजा हासिल होगा ।" इसके बाद नगरके काजी तक यह बात पहुँचाई गई । काजी साहब और भी निष्ठुर थे; उन्होने हकीकतको कैद कर दिया । परन्तु स्यालकोटका शासनकर्त्ता अमीरबेग दयालु और बुद्धिमान् आदमी था; उसने हकीकतके छुड़ाने की चेष्टा की, पर कुछ फल न हुआ । विचार होकर हकीकतके प्राणदण्ड की आज्ञा हुई । उससे यह भी कहा गया कि यदि तुम मुसलमान हो जाओ तो छूट सकते हो । हकीकतने यह बात अस्वीकार की ।

हकीकतकी माँ यह सुनकर कि पुत्र मारा जायगा बहुत व्याकुल हुई । उसे यही एक पुत्र थी, अतएव वह इसके बदलेमें सब कुछ देनेको तैयार थी । उसने बहुत विनय की; पर काजीजीने उसकी एक न सुनी । अन्तमें निरुपाय होकर माँने कहा, "बेटा, खैर तुम मुसलमान हो जाओ; हम तुमको केवल देखकर सन्तोष करेंगे ।" हकीकतने आखोंमे आसू भर कर उत्तर दिया—"नहीं अम्मा, मैं ईश्वरका कभी अविश्वास नहीं करूंगा ।" हकीकतके पिता बागमलने अमीरबेगसे बिनती की, पर अमीरबेगकी इच्छा होने परभी काजीके डरसे वह हकीकत को न बचा सका । अन्तमें धर्म्मवीर हकीकतने साहसपूर्वक तलवारके नीचे सिर झुकाकर अपने प्राण दिये ।

भाई तारूसिंह।

मुसलमानी राज्यकी अवनतिके समय, जब कि भारतपर विदेशियोंका आक्रमण हो रहा था, भारतके पश्चिम भागमें सिख, मध्यभागमे जाट और दक्षिणमें मराठे बहुत ही बलवान होरहे थे। विदेशी आक्रमणकारी इतने मजबूत थे कि सम्पूर्ण मोगल राज्य उनसे बहुत डरता था। यह अवसर पाकर जाट अपने राजाओंकी सहायता करने और मराठे पर्वतोमें रहकर मोगल राज्यके लूटने और उसका गौरव मिटानेमें चूकते नहीं थे। सिखोंमे जो बहुत मजबूत थे वे सिंह कहलाते थे। इनके पास कोई सेना नहीं थी, न दुर्ग ही थे; अतएव वे मुसलमानोंके विरुद्ध लड़नेका साहस नहीं कर सकते थे। इसका यह परिणाम हुआ कि मुसलमान बादशाह मराठों और जाटोंका उपद्रव रोकनेकी शक्ति अपने में न देखकर इन बेचारे सीधे सादे शान्तिचित्त किन्तु वीर सिंहों (सिखों) पर अत्याचार करते थे और चाहते थे कि वे जड़ मूलसे नष्ट हो जावें।

१०वीं शताब्दीके आरम्भमें खांजहां नामक एक व्यक्ति लाहौरका शासनकर्त्ता था वह निष्ठुर था। अपने इलाके भरमें उसने इस बातका ढँढोरा करा दिया था कि गावोंके चौकीदार अपने गावोंमे सिंहोंको न बसने दें; यदि किसी सिंह (सिख) को कहीं पावें तो तुरन्त हमारे सामने उपस्थित करें उसने यह भी ढँढोरा करा दिया था कि जो कोई किसी सिंहका सिर काटकर ले आवेगा उसे इनाम दियाजायगा। सिखोंके हितैषियों और भाईबन्दोंके कामों पर सदा दृष्टि रखनेके

लिये उसने जासूस नियुक्त कर रखे थे। इस प्रकार सिखोंके बर्बाद करनेका उसने सङ्कल्प किया था। इससे बहुतसे कम बुद्धि तथा थोड़े विश्वासके लोगोंने अपना धर्म्म त्यागा परन्तु जो निडर और विश्वासी सिख थे वे शहर छोड़ जङ्गलोंमें जा बसे और बहुतोंने धर्म्मके लिये अपने प्राण त्यागे। जो विश्वासी तेजस्वी सिख जङ्गलोंमें जा बसे थे उन्होंने अपना एक दल बना लिया था जो पन्थ कहा जाता था। इन लोगोंको खाने पीनेका बहुत कष्ट होता अतएव दूसरे सिख इनकी सहायता करते। इसी पन्थ दलमेंसे सिखोंके गुरु चुने जाते, इसलिये सब सिख उनका बहुत मान करते थे।

भाई तारूसिंह अपनी विधवा माता और क्वारी बहिन के साथ पञ्जाबके एक छोटे गांवमें रहते थे। इस बखेड़े और उपद्रवके समय उनकी उमर २५ वर्षकी थी। वे खेती करते और इस उद्यमसे-जोकुछ पाते थे अपने खर्चमें न लाकर अपने जाति-भाइयोंकी सेवामें लगाते। उनकी माँ और बहिन गांव के भले घरमें काम करके किसी तरह निबाह करतीं। यद्यपि येलोग गरीब थे, परन्तु ईश्वरपर पूरा भरोसा रखते थे। ऐसा कोई दिन न जाता जिस दिन वे गुरुका उपदेश या कोई धर्म्म-ग्रन्थ न पढ़ते। तारूसिंहका हृदय साफ था, उनका मुख देखने से सरलता और पवित्रताका परिचय मिलता था। उनकी चाल चलन बहुत अच्छी थी, अत्याचार उपद्रव कष्टादिकी परवा वे नहीं करते थे और बड़े धार्म्मिक थे। किसी व्यक्तिने लाहोरके शासनकर्त्ताको यह खबर दी कि भाई तारूसिंह पन्थोंको भोजन पहुँचाता है। इतना सुनतेही खांजहांने उनके

पकड़नेको आदमी भेजा आदमियोंके जातेही तारूसिंह स्वयं आगे बढ़कर इनसे मिले और खांजहांके भेजे हुए लोग उनको पकड़ कर ले चले। रास्तेमें बहुतसे सिखोंने उन आदमियोंसे लड़कर इनको छुड़ा लेना चाहा, परन्तु इन्होने उनसे कहा, "यद्यपि इस समय आपलोग मुझको छुड़ा लेंगे, परन्तु फिर अवश्यही बहुत से मुसलमान आकर आपकी दुर्दशा करेंगे। इसलिये भाइयो आप घरलौट जाइये, मुझे छुड़ानेका प्रयत्न न कीजिये। मैं जानता हूँ कि मैं निर्दोष हूँ और मुझे भरोसा है कि सूबेदार खांजहां मुझको छोड़ देगा। और यदि मेरा छुटकारा न हो तौभी बहुत से मनुष्योंका खून करके अपना बचाव करनेकी मेरा इच्छा नहीं है। इस संसरमें अमर होकर कोई नहीं आया है। देखिये, हमारे गुरुओंने धर्म्मके लिये कितने क्लेश सहे हैं। यदि उनके दृष्टान्तके अनुसार हमलोग काम न कर सकें तो बड़ी लज्जा की बात है।

तारूसिंहका यह उपदेश सुनकर सब सिख चले गये; इधर ये लाहोरमें कैद किये गये। दूसरे दिनकी सुबहको सरदारोंने उनको दरबारमें उपस्थित किया। आतेही तारूसिंहने "वाह गुरुकी फतह" की ध्वनि की। मकान कांप उठा। खांजहांने क्रोधमें आकर कुछ कहना चाहा, पर इन्होंने उसे रोक कर कहा, "मैंने आपका क्या नुकसान किया कि आपने मेरी यह दशा की? मैं गरीब आदमी हूं, खेती करके किसी तरह गुजारा करता हूं, सरकारी लगान देता हूं, जो कुछ बचता है उसे दान पुण्यमें खर्च करता हूं। मुझपर अत्याचार करके आप पापका बोझ न उठावें। सब धर्म्मोंका यह उपदेश है कि

राजा पाप करता है वह नरक में जाता है।" इतना सुनते ही खांजहांके सिरसे पैरतक आग लग गई, उसनेआज्ञा दी कि तारूसिंह काटोंपर लिटाया जाय। आज्ञानुसार ऐसाही हुआ। तारूसिंह के शरीरके अनेक स्थानोंसे खुन बहने लगा, इतने पर भी वे प्रसन्न थे। दो घंटेतक दुःख देनेके बाद आखिर थक कर कष्ट पहुँचानेवाले उनको पुनः कैदखानेमें लेगये।

दूसरे दिन प्रातःकाल लोग फिर उनको सूबेदारके दरबार में ले गये। इस बीचमें उनकी तेजस्विता और दृढ़ता देखकर खांजहांको बहुत आश्चर्य्य हो चुका था। उसने सोचा "अगर यह शख्स मुसलमान हो जाय तो इससे बड़े काम निकले। पर ज्यादा तकलीफ न पहुंचाकर इसे लालचमें डालना चाहिये।" आखिर उसने कहा—'तारूसिंह, अगर तुम मजहब इस्लाम कुबूल करो तो तुम्हारी जान बख्श दी जावे।" तारूसिंहने उत्तर दिया,—"क्या विश्वासघाती होकर मैं अपनी जान बचाऊं? यह कभी नहीं हो सकता। सिर दे दूंगा पर सार न दूंगा।" खांजहांने फिर कहा, "देखो अपने मजहबकी पाबन्दीकी वजहसे तुम किस कदर तकलीफ उठा रहे हो। गरीबी और फिक्रसे लागिर हो रहे हो! जरा ख्याल करो, मुसलमान होजानेसे तुम कैसे अमीर हो जाओगे मैं तुम्हे इतनी दौलत दूंगा कि हमेशेके लिये बआराम जिन्दगी बसर करने को काफी हो।" इसपर तारूसिंहने यह जवाब दिया-"महाशय, मैं अपना धर्म्म कभी नहीं छोड़ूँगा।"

खांजहां इस बातसे बहुतही क्रुद्ध हुआ। एक चक्रमें भाई तारूसिंहके हाथपांव बाँधकर उसने उसे घुमानेकी आज्ञा दी!

तारूसिंहकी हड्डियां टूटने लगीं, परन्तु उनका धर्म्मोत्साह कम नहीं हुआ, बल्कि और भी बढ़ गया। उनका साहस, दृढ़त्व, धर्मविश्वास और वीरता देखकर सब लोग चकित हुए। किस अपूर्व शक्तिके कारण तारूसिंह इतना कष्ट सह सकते थे यह वहां कोई नहीं जानता था। वास्तवमें परमेश्वर अपने विश्वासियोंकी सहायता करता है। थोड़ी देरके बाद वे चक्रसे नीचे उतारे गये। खांजहांने कहा—"तारूसिंह, मजहब इस्लाम कबूल करो, वर्ना तुम्हारे सिरकी बेनी काट ली जावेगी।" तारूसिंह बोले "कुछ परवा नहीं, मैं अपनी जानतक दूंगा।" इसके बाद पुनः उनको कष्ट दिया जाने लगा परन्तु जब किसी तरह उन्होंने न माना तब मुसलमानोंने उनको अधमरी अवस्थामें छोड़ दिया। सिख उनको एक धर्मशालामें ले गये। कई दिन बाद वह इस संसारसे विदा होकर अमरलोकको चले गये। धन्य भाई तारूसिंह! स्वदेश और स्वधर्म्मके लिये ऐसा ही साहस होना चाहिये।

DBA000010919HIN

सुबेगसिंह सबजसिंह।

लाहौरनिवासी भाई सुबेगसिंह जाट जातिके थे। उनके पूर्वज बड़े प्रतिष्ठित थे और राजकार्य्य करके अपनी जीविका चलाते थे। युवावस्थामें सुबेगसिंह शासनकर्त्ताके दरबारियोंमें समझे जाते थे और उनको पन्द्रहसे बीस गाँवोंतककी सूबेदारीका काम सौंपा गया था। वे फारसी खूब जानते थे और गुरुमुखी तो उनकी मातृभाषा ही थी। इन दो भाषाओंके अच्छे ज्ञानके कारण लोग उनका बड़ा मान करते थे। सिखधर्म्मके विषयमें जब कभी वादविवाद होता तब मुसलमान अफसर इनसे सलाह लेते। उस समय मुहम्मदशाह देहलीका बादशाह था, उसने सुबेगसिंहको यह (अर्थात् धार्मिक वादविवादमें सलाह देनेका) अधिकार देकर उनका सम्मान बढ़ाया था।

सुबेगसिंहका सबजसिंह नामक एक पुत्र था। उन्होंने उसे फारसी और अरबीकी अच्छी शिक्षा दी थी। और गुरुमुखी भी वह भलीभांति जानता था। पढ़नेकी समाप्तिके समय जब वह अठारहवें वर्षमें था तब एक दिन उसके शिक्षक (मौलवी) से उससे धर्मके विषयमें कुछ तर्क हुआ। उस समय हिन्दू मुसलमानोंमें मेल नहीं था। इससे पहलेकी शताब्दी में औरङ्गजेब और उसके उत्तराधिकारी हिन्दुओंपर बड़ा अत्याचार कर चुके थे और सिखोंने भी मुसलमानोंको बहुत दुःख पहुंचाया था। यह वह समय था जब मुगलोंकी बादशाहत कमजोर हो गई थी और हर प्रदेशमें बलवानों तथा

डाकुओंके दल गवर्नमेण्टके विरुद्ध खड़े होनेका साहस करते थे। अतएव ऐसी गड़गड़के समय धर्म्मपर बहस होना आश्चर्य्यकी बात नहीं है। अस्तु, बहस इतनी बढ़ी कि मौलवीने क्रोधमें आकर शासनकर्त्ताको इसकी सूचना की। इसपर सुबेगसिंह मय सबजसिंहके दरबारमें बुलाये गये। दरबारमें उपस्थित होनेपर उनसे कहा गया कि यदि मुसलमान होना स्वीकार करो तो तुम छोड़ दिये जा सकते हो अन्यथा नहीं। सुबेगसिंहने इस बातके उत्तरमें कहा—"आपकी दण्ड देनेकी आज्ञा धन्य हो, यह कुटिल समय धन्य हो, आपकी चालें धन्य हों और हमारा यह शरीर भी जो धर्म्मके लिये क्षय होगा धन्य हो। मुसलमान हो जानेसे यदि हम मरनेसे बच सकें तो एक प्रकार अच्छा ही है; पर मुसलमान होकर भी जब एक दिन मरना पड़ेगा तब धर्म्म छोड़कर अपनेको कलंकित क्यों करें ?"

शासनकर्त्ता बहुतसे सिखोंको धर्म्मके पीछे प्राण देते देख चुका था; पर यह आशा उसे नहीं थी कि सुबेगसिंह जो इस्लाम धर्म्मके पण्डित थे इस ढंगकी बात करेंगे। निदान यह बात सुनकर उसने समग्र सिख सम्प्रदायको नष्ट कर डालने का निश्चय किया। तुरन्त घातकोंको बुलवाया और आज्ञा दी कि इनको (अर्थात् सुबेगसिंह और सबजसिंहको) चक्रपर चढ़ाकर घुमाओ और कष्ट पहुँचाओ। वे दोनो "अकाल अकाल" पुकारने लगे। एक घण्टा कष्ट पहुँचानेके बाद कुछ देरके लिये उनको बिश्राम दिया गया। फिर उनको बहुत तरहके लालच दिये गये; पर किसी तरह उनका मन ढीला

16919 [illegible] 5.11.60

नहीं हुआ। तब शासनकर्त्ताने सबजसिंहसे कहा—"लड़के, तेरे वालिद अब बूढ़े हो गये; वे जिन्दगीके सब आराम हासिल कर चुके हैं, इसीलिये मौतका उनको कुछ खौफ नहीं। लेकिन तेरी उमर कम है; तूने अभीतक दुनियाका कुछ मजा नहीं चखा; ऐसी हालतमें तू क्यों जान दे रहा है? अगर मुसलमान हो जायगा तो जान तो बचेहीगी और बहुत तरहके आराम पायेगा।" सबजसिंह बोला,—"मैं धर्म्म नहीं छोड़ सकता।"

इतना सुनना था कि शासनकर्त्ता अपने हाथोंसे उसे चाबुक मारने लगा और फिर आज्ञा दी कि "गर्म लोहेसे इसका तमाम बदन जलाओ।" उसी समय आज्ञाका पालन हुआ। कष्ट पाकर सबजसिंह चिल्ला उठा—"मुझे बचाओ, मुझे बचाओ। मैं मुसलमान होता हूँ।" शासनकर्त्ता बालककी यह बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसने तुरन्त सुबेगसिंहको जो दूसरी ओर थे बुलवाकर यह हाल कहा। पिताको देखते ही जिनके मुखपर धर्म्मकी ज्योति चमक रही थी सबजसिंह का मृत्युभय भाग गया। पश्चात् सुबेगसिंहने कहा "पुत्र, कोई इस संसारमें सदा नहीं रहता। तुम मरनेसे न डरो क्योंकि आत्मा अमर है। देखो, प्रह्लाद मणिसिंह हरिश्चन्द आदि महात्माओंने धर्म्मके लिये किस प्रकार स्वार्थ त्यागा। धर्म्मने ही इनको श्रद्धाका पात्र बनाया और सद्गति दी।" शासनकर्त्ता पहले तो सुबेगसिंहकी बातें चुपचाप सुनता रहा, पर जब उसने सबजसिंह पर उन बातोंका असर होते देखा तब सुबेगकी जबान रोक दी। उधर सुबेगसिंह चुप हुए इधर सबजसिंह

ने शासनकर्त्तासे कहा—"मैं निर्बोध बालक हूं ; तुमने मुझे धोखा देना चाहा । मेरे प्राण लो पर मैं धर्म्म न छोड़ूंगा ।" फिर पिता पुत्रको कष्ट पहुंचाया जाने लगा और आध घण्टेके बाद अधमरी अवस्थामें वे कैदखानेमें पहुंचाये गये, वहां सबजासिंहका तो उसी दिन प्राणान्त हो गया और सुबेगसिंह कई दिन कष्ट भोगकर स्वर्गको सिधारे ।

सिक्खोंका धार्म्मिक जोश और धर्म्मरक्षाके लिये प्राण देनेका वृत्तान्त भारतके इतिहासमें गौरवकी चीज है । पञ्जाबमें सिक्खोंने एक समय जो धार्मिक विश्वास दिखाया था उससे सारा भारतवर्ष धन्य हुआ था । धर्म्मके अपूर्व बलके आगे बड़े बड़े बादशाहोंको वे तुच्छ समझते थे । धर्म्मकी ज्योति, जोश और तेजी उनमें पूरी तरह वर्त्तमान थी ।

National Library,
Calcutta-27
5143

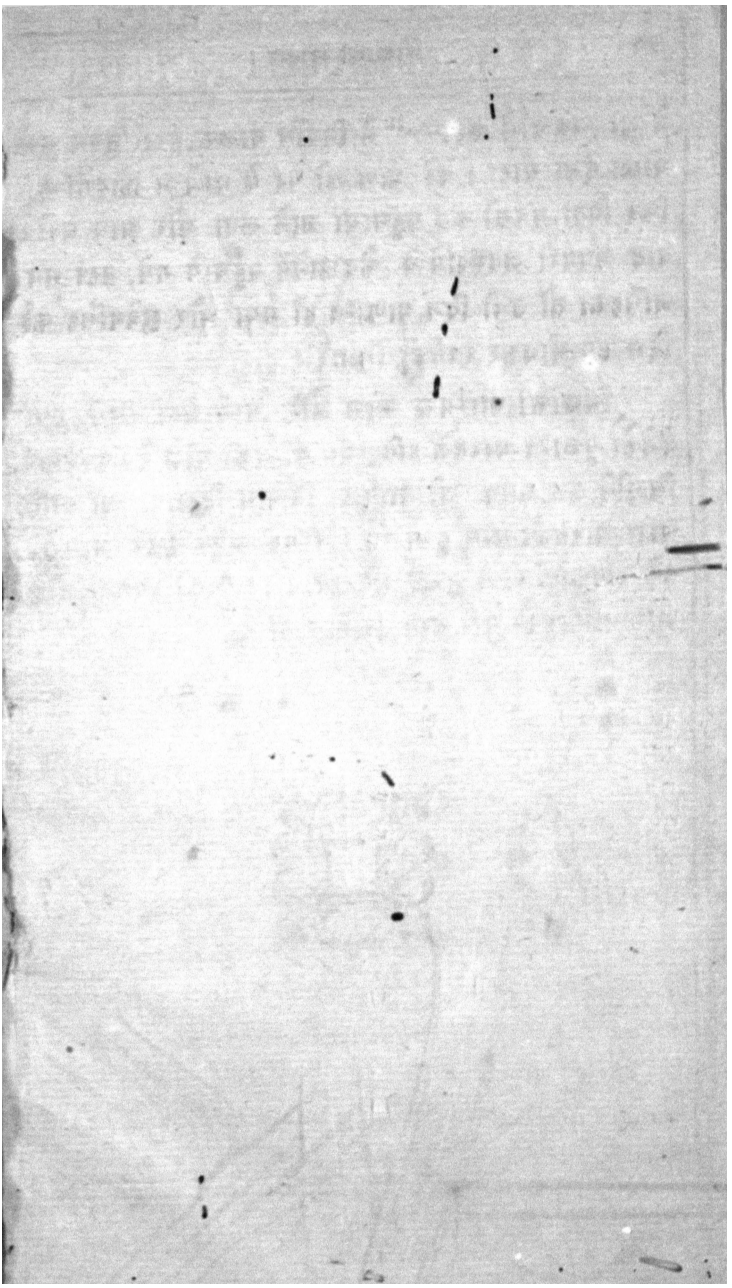

इन पुस्तकों को जरूर पढ़िये।

बर्नियर की भारतयात्रा तीन भाग	१॥)	रणजीतसिंह	।)
		रंभा	१)
भारतका इतिहास	≡)	लँगड़ा खूनी	=)
हैदर अली	॥)	आश्चर्य प्रदीप	-)
कालीनागिन दो भाग	१॥)	तिलस्मी बुर्ज	-)
पूनाका इतिहास	-)	माया महल	॥=
कामिनी	-)	पुतली महल	१)
जवाहरातकी पेटी	-)	पंजाब पतन	॥)
राजपूत कीर्ति	=)	माया	=)
भारतका अध पतन	=)	जासूसी आखेट	॥)
पद्मकुमारी कुमारी	१॥)	चाचाका खून	।-)
सुवामित्र	।=)	अलबेला रसिया	।=)
काश्मीर पतन	॥=)	स्वतन्त्रता देवी	=)॥
भूतोंका डेरा	≡)	भूतोंकी लड़ाई	-)
चन्द्रलोक की यात्रा	=)	दुर्गेश नन्दनी	॥।)
माया रानी	=)	चार दोस्तोंकी हँसी	।)
वाजिद अली	।=)	चांदी का महल	≡)
महेन्द्रकुमार ६ भाग	३।)	किलेकी रानी	॥।)

पुस्तक मिलने का पता–

गङ्गाप्रसाद अरोड़ा

कल्पतरु प्रेस, बनारस।

DBA000010919HIN